Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

समकालीन भारत में महिलाओं की प्रस्थिति

डॉ0 हमेलता
आडिटर,
स्थानीय निधि लेखा परीक्षा विभाग,
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश : स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व और बाद आम लोगों के बीच महिलाओं के सम्बन्ध में जो धारणाएँ व्याप्त थी और हैं उसमें थोड़ा बदलाव आया है। आम लोगों की नजर में भारतीय स्त्रियों की पहचान एक व्यक्ति के रूप में नहीं होती है, बल्कि उसकी पहचान स्वयं एवं अन्य लोगों के द्वारा पुरुषों के साथ एक पुत्री, एक पत्नी, एक बहन और माँ के रूप में होती है। परिवार के बाहर उसकी पहचान वही है, जो उस महिला के सगे–सम्बन्धी के द्वारा सामान्यतः तय किये जाते हैं। जब एक महिला स्वयं को एक व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करना चाहती है, तो उसके सामने अनेक समस्यायें उठने लगती है। यद्यपि इस तथ्य से इनकान नहीं किया जा सकता कि सरकार के तमाम प्रयासों ने महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति को पहले से बहुत बेहतर स्थिति में पहुंचाया है लेकिन अब नए–नए कानून बनाने से अधिक यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि कैसे उपलब्ध कानूनों का सही क्रियान्वयन किया जाये ताकि अपने संवैधानिक अधिकारों का लाभ शहरों में रह रही उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों की महिलायें भी उठा सकें जो संविधान द्वारा प्रदान किये गये मौलिक अधिकारों से वंचित हैं।

मुख्य शब्द : प्रस्थिति, परिवार, सम्बन्ध, सामाजिक व आर्थिक एवं संवैधानिक अधिकार आदि।

प्रस्थिति और भूमिका पूरक शब्दावली है। हमारे सन्दर्भ में 'ऐसी भूमिकाएँ' जिनके सम्पादन में व्यक्ति समाज में प्रतिष्ठित होता है, वही प्रस्थिति कहलाती है। इसी कारण इसे समाज में स्त्रियों का स्थान या स्थिति भी कहा जाता है। समाज जनजातीय हो या गैर जनजातीय 'महिलाओं के प्रस्थिति' के सम्बन्ध में अनेक विचार प्रचलित मिलते हैं। कुछ एक का कहना है कि जनजातीय समाजों में गैर जनजातियों की अपेक्षा स्त्रियाँ उच्च प्रस्थिति की होती हैं। उच्च प्रस्थिति के सन्दर्भ में धर्म को आधार नहीं माना जा सकता। सामाजिक विज्ञान में हम ऐसा नहीं कह सकते कि हिन्दू धर्म, इसाई धर्म से अन्तर्गत स्त्रियों का स्थान नीचा है।[1]

भारतीय सामज में महिलाएँ अपमान, अत्याचार और शोषण का शिकार रही हैं इसीलिए भारत में महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति का मुद्दा हमेशा ही मुख्यधारा की चर्चा का हिस्सा रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, धार्मिक निषेध, जाति बन्धन, स्त्री नेतृत्व का अभाव तथा पुरुषों का उनके प्रति अनुचित दृष्टिकोण आदि थे। हालांकि स्वतंत्रता के बाद से आई विभिन्न सरकारों

ने देश में महिलाओं को सामाजिक व आर्थिक विकास में बराबर की हिस्सेदारी के अवसर प्रदान करने के लिए समय–समय पर अनेक कानून लाकर उनके सशक्तीकरण को सुनिश्चित करने का प्रयास किया है। इसके बावजूद मुख्यधारा में महिलाओं की हिस्सेदारी सुनिश्चित करने के मामले में भारत अभी भी दुनिया के कई देशों से पीछे हैं।

महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति :

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर वहां की महिलाओं की स्थिति है। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहां वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, वरन् उनके सेवक और सहायक बनाना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भांति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ सन्निहित हैं।[2]

भारतीय संविधान में महिलाओं को समानता के अधिकार दिए तो गए फिर भी अपवाद छोड़कर यदि समग्रता में देखा जाए तो वर्तमान में भी भारतीय समाज की पुरुष प्रधान सोच के कारण अधिकतर महिलाएँ अपने कैरियर, विवाह या विवाह के बाद भी अपने या अपने बच्चों संबंधित निर्णय लेने के बाद भी समाज में महिलाओं की सामाजिक स्थिति बेहद कमजोर है। बलात्कार, हत्या, दहेज, घरेलू हिंसा जैसे मामले आए दिन अखबारों की सुर्खियां बने रहते हैं। इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि 1947 से आई लगभग सभी सरकारों द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन किया गया है लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न हो सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिला है। भारत सरकार ने महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा करने के लिए विभिन्न कानूनों को समय–समय पर पारित किया जिनमें हिंदू विवाह अधिनियम (1995), हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम (1956), दहेज प्रतिषेध अधिनियम (1961), गर्भावस्था अधिनियम की मेडिकल टर्मिनेशन (1971), समान पारिश्रमिक अधिनियम (1976), बाल विवाह निरोधक अधिनियम (1976) आदि प्रमुख हैं फिर भी शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सुरक्षा के मानकों पर भारतीय महिलाएँ संघर्ष करती दिखाई देती हैं।

संविधान में महिलाओं हेतु प्रावधान :

- अनुच्छेद 15 में धर्म, जाति, जन्मस्थान अथवा लिंग के आधार पर भेदभाव न किया जाना सम्मिलित है।
- अनुच्छेद 15 (3) में महिलाओं के हित में विशेष उपबंधों का निर्माण किया जाना सम्मिलित है।
- अनुच्छेद 16 में लोकसेवा में समान रूप से अवसर दिया जाना सम्मिलित है।
- अनुच्छेद 19 में समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता निहित है।
- अनुच्छेद 21 में प्राण एवं दैहिक स्वाधीनता से वंचित न किया जाना सम्मिलित है।
- अनुच्छेद 23 में क्रय–विक्रय एवं बलात् श्रम से संरक्षण निहित है।
- अनुच्छेद 40 में पंचायती राज संस्थाओं में 73वें एवं 74वें संशोधन द्वारा 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है।
- अनुच्छेद 42 में काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध शामिल है।

- अनुच्देद 47 में महिलाओं हेतु पोषाहार, जीवन स्तर तथा लोकस्वास्थ्य में सुधार हेतु उपबंध का करना सम्मिलित है।
- अनुच्छेद 51 में स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध प्रथाओं का त्याग करना शामिल है।[3]

विभिन्न क्षेत्रों महिलाओं की भागीदारी :

महिलाएँ आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका तो निभाती है लेकिन उनके काम का सही मूल्यांकन नहीं किया जाता है। राष्ट्रीय आंकड़ा संग्रहण एजेंसिया भी इस तथ्य को स्वीकार करती हैं कि श्रमिकों के रूप में महिलाओं की भागीदारी को लेकर एक गंभीर न्यूनानुमान है।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की 2011 की रिपोर्ट के अनुसार लगभग 20 फीसदी शहरी महिलाएँ घरेलू सहायिका, सफाई कर्मचारी, विक्रेता, फेरी वाले एवं दुकानों में सेल्सगर्ल के रूप में काम करती हैं। वहीं 43 फीसदी महिलाएँ स्वनियोजित कार्य करती हैं जबकि इतनी ही महिलाएँ मासिक वेतन पर काम करती है। लगभग 46 फीसदी मासिक वेतन पर काम करने वाली शहरी महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा एवं रोजगार लाभ तय नहीं है। जबकि 56 फीसदी महिलाओं के पास लिखित में किसी भीतरह का जॉब कांट्रेक्ट नहीं हैं, अर्थात् देश की जीडीपी में उनकी हिस्सेदारी का कोई हिसाब नहीं है।[4]

एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार भारत में 48 फीसदी महिलाएं स्वरोजगार किसान हैं और डेयरी उद्योग में लगभग 75 लाख महिलाएँ काम कर रही है। साल 2001 में, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला श्रम की भागदारी दर 30.79 प्रतिशत थी वहीं शहरी क्षेत्रों में 11.88 प्रतिशत थी। वर्तमान में निजी क्षेत्र कंपनियों में कुल वर्कफोर्स की 24.5 फीसदी भागीदारी महिलाओं की है। सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनियों में महिलाओं की ये हिस्सेदारी तकरीबन 17.9 प्रतिशत है।

भूमि और संपत्ति संबंधी अधिकार के संदर्भ में भारत का कानून किसी महिला को अपने पिता की पुश्तैनी संपत्ति में पूरा अधिकार देता है, अर्थात् यदि पिता ने खुद जमा की संपत्ति की कोई वसीयत नहीं की है, तब उनकी मृत्यु के बाद संपति में लड़की को भी उसके भाईयों और मां जितना ही हिस्सा मिलेगा। यहाँ तक की शादी के बाद भी यह अधिकार बरकरार रहेगा। हालांकि अभी नवंबर 2015 में आए सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने पिता की संपत्ति में बेटियों के बराबर के अधिकार को सीमित कर दिया है। न्यायालय ने कहा है कि अगर पिता की मृत्यु 2005 में हिंदू उत्तराधिकारी कानून में संशोधन से पहले हो चुकी है तो ऐसी स्थिति में बेटियों को संपत्ति में बराबर के अधिकार से वंचित रखा जाएगा। अदालत ने कहा कि हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के संशोधित प्रावधान के एक सामाजिक विधान होने के बावजूद पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं हो सकता। बेटी को संपत्ति में बराबर का हिस्सेदार तभी माना जाएगा, जब पिता 9 सितंबर, 2005 को जीवित हों। दर असल हिंदू उत्तराधिकार कानून 1956 में बेटी के लिए पिता की संपत्ति में किसी तरह के कानूनी अधिकार की बात नहीं कहीं गई थी, जबकि संयुक्त हिन्दू परिवार होने की स्थिति में बेटी को जीविका की मांग करने का अधिकार दिया गया था। लेकिन 9 सितंबर, 2005 को हुए संशोधन के बाद पिता की संपत्ति में बेटी को भी बेटे के बराबर अधिकार दिया गया था।[5]

सुझाव :

समकालीन भारत में महिलाओं की बेहतर प्रस्थिति हेतु सुझाव अद्योलिखित है। यथा–

1. महिला शिक्षा की दिशा में ठोस प्रयास किये जाये।
2. समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाया जाये। इसमें गैर सरकारी संगठनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।
3. महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जाये।
4. बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा के बाद व्यवसाय परक शिक्षा दी जानी चाहिए।
5. इस क्षेत्र से जुड़े कानूनों का वास्तविक क्रियान्वयन हो, पुलिस एवं प्रशासन को इसके लिए मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार किया जाये।
6. महिलाओं के विरूद्ध अपराधों पर प्रभावी रोग लगायी जाये, जिससे उसमें असुरक्षा की भावना कम हो एवं हर क्षेत्र में आगे बढ़ सके।
7. ग्रामीण महिलाओं की स्थिति सुधार हेतु अलग से योजना का निर्माण किया जाये।
8. महिलाओं में जागृति लायी जाये और उसमें आत्मविश्वास जगाया जाये, जिससे वे अपने कर्तव्यों के साथ–साथ अधिकारों को भी समझे एवं उन्हें पाने के लिए सजग रहें।
9. उत्पीड़ित महिलाओं के सहायता हेतु सभी स्तरो ंपर संगठनों की स्थापना की जाये।

समाज का असन्तुलित विकास आत्मविश्वास एवं विघटन को बढ़ावा देता है। यदि पतन से बचना है, तो नारी को भी सभी अधिकार एवं सुविधायें देनी होगी जिनकी वह अधिकारिणी है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था–

''स्त्रियों के स्थिति में सुधार लाये बिना विश्व का कल्याण सम्भव नहीं है।''

निष्कर्ष स्वरूप कहा जाए तो समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार लाए जाने के लिए अभी भी अनेक प्रयास करने की आवश्यकता है। शिक्षा और स्वास्थ्य के मामले में केरल जैसे कुछ राज्यों और अपवादों को छोड़ दिया जाए तो महिलाओं की स्थिति निराशाजनक ही बनी हुई है। आर्थिक क्षेत्र में महिलाएं अभी भी आत्मनिर्भर नहीं हो सकी हैं इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि सरकार के तमाम प्रयासों ने महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति को पहले से बहुत बेहतर स्थिति में पहुंचाया है लेकिन अब नए–नए कानूनों का सही क्रियान्वयन किया जाए ताकि अपने संवैधानिक अधिकारों का लाभ शहरों में रह रही उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों की वह महिलाएँ भी उठा सकें जो संविधान द्वारा प्रदान किए गए मौलिक अधिकारों से भी वंचित हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. श्रीवास्तव ए0आर0एन0, भारतीय समाज, शेखर प्रकाशन, उ0प्र0, पृ0 176
2. सिंह, रघुराज, भारतीय नारी कल और आज (2008), पृ0 175
3. बसु, डी0डी0, भारतीय संविधान (2014), उत्तर प्रदेश, पृ0 115
4. NSSO सर्वेक्षण रिपोर्ट, भारत सरकार, पृ0 38
5. www.wikipedia.com